

श्रीअरविन्द कर्मधारा



जुलाई-अगस्त , 2020

वर्ष 50

अंक-4

श्रीअरविन्द आश्रम-दिल्ली शाखा

श्रीअरविन्द मार्ग, नई दिल्ली

श्री अरविन्द कर्मधारा

श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली शाखा का मुखपत्र

जुलाई-अगस्त 2020

(अंक-4)

संस्थापक

श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर 'फकीर'

सम्पादन : अपर्णा रॉय

विशेष परामर्श समिति

कु0 तारा जौहर, विजया भारती,

ऑनलाइन पब्लिकेशन ऑफ

श्रीअरविन्द आश्रम, दिल्ली शाखा

(निःशुल्क उपलब्ध)

कृपया सब्सक्राइब करें-

saakarmdhara@rediffmail.com

कार्यालय

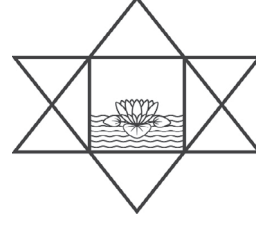
श्री अरविन्द आश्रम, दिल्ली-शाखा

श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-110016

दूरभाष: 26567863, 26524810

आश्रम वैबसाइट

(www.sriarobindoashram.net)



शरीर और उच्चतर चेतना

जब शरीर उच्च चेतना की ओर खुलता है तब वह चमत्कार प्रस्तुत कर सकत है। एक बार की बात है तब मैं चौदह वर्ष की थी। मेरे दिमाग में एक विचार आया कि क्या मैं बड़े हॉल को तीन कदमों में नाप सकती हूँ और जब मैंने ऐसा संकल्प लिया तो सचमुच मैंने तीन कदमों में बड़े हॉल को नाप लिया। हर बात अपने में मूल्य रखती है लेकिन उसका मूल्य तभी है जब वह तुम्हें अपने अन्दर कुछ नया खोज पाने में मदद करें, तुम्हारी सत्ता के सत्य को जानने में सहायक हो और तब तुम इस तथ्य को जानने लग जाते हो कि संसार में इतने विरोध, विषमताएँ क्यों हैं। ये इसलिए हैं कि यहाँ जैसे वस्तु, पदार्थ, व्यक्ति अपनी सही जगह पर नहीं है। मैं केवल भौतिक स्तर की बात नहीं कह रही हूँ, सत्ता की गहराई में यह तथ्य स्पष्ट होता है जैसे यहाँ सब कुछ गलत जगह (Mis Place) पर हो।

-श्रीमाँ



विषय-सूची

क्र.सं.	रचना	रचनाकार	पृष्ठ
1	प्रार्थना और ध्यान	श्रीमाँ	4
2	सम्पादकीय	अपर्णा रॉय	5
3	15 अगस्त 1947 का श्रीअरविन्द का सन्देश	श्रीअरविन्द	8
4	जन्म का चमत्कार	श्रीअरविन्द	12
5	जन्मदिन पर स्नेहाशीष	श्रीअरविन्द	14
6	छोटी बातें बड़े महत्त्व	सुरेन्द्रनाथ जौहर फ़कीर	17
7	श्रीअरविन्द	श्रीमाँ	20
8	सावित्री एक संक्षिप्त परिचय	मंगेश नाडकर्णी	21
9	नव दृष्टि	सुमित्रानन्दन पंत	27
10	प्रेम और परमात्मा	अज्ञात	28
11	मेरा जन्मदिन	सुरेन्द्रनाथ जौहर	30
12	आश्रम गतिविधियाँ	संकलन	31



प्रार्थना और ध्यान



हे भगवान! कितनी तीव्रता के साथ मेरी अभीप्सा तेरी ओर उठ रही है। तू अपने विधान की पूर्ण चेतना हमें प्रदान कर, अपने संकल्प को निरन्तर देखते रहने की शक्ति प्रदान कर जिसमें कि हमारा निर्णय तेरा निर्णय हो और हमारा जीवन एकमात्र तेरी सेवा में ही समर्पित हो और तेरी अन्तःप्रेरणा की यथासम्भव एक पूर्ण प्रतिमूर्ति हो।

हे प्रभु! समस्त अन्धकार को दूर कर ताकि प्रत्येक मनुष्य उस शांत निश्चितता को प्राप्त करे जिसे तेरा दिव्य प्रकाश ले आता है!

-श्रीमाँ

सम्पादकीय

“सावित्री श्री अरविन्द का पूर्ण रूपान्तर योग है। यह योग प्रथम बार पृथ्वी चेतना तक आया है। यह आध्यात्मिक उत्कर्ष की अनुपम कृति है, अद्वितीय रचना है। जितना अधिक तुम इसके सान्निध्य में प्रवेश करते हो, उतना ही ऊपर उठा लिए जाते हो। यह सर्वोत्कृष्ट अमूल्य देन है जो श्रीअरविन्द ने मनुष्य को प्रदान की है। अकेली यह रचना ही तुम्हें सबसे ऊपरी सीढ़ी से जोड़ देने के लिए पर्याप्त है। यदि तुम सचमुच इस पर ध्यान एकाग्र करो तो समस्त सम्भावित सहायता तुम्हें उसके द्वारा मिलेगी। वे लोग जो योग-पथ का अनुसरण करना चाहते हैं, उन्हें सावित्री से ठोस मदद मिली है मानो स्वयं भगवान तुम्हें हाथ पकड़कर तुम्हारे लक्ष्य की ओर ले जा रहे हैं। प्रत्येक प्रश्न, चाहे वह कितना भी व्यक्तिगत क्यों न हो, सावित्री में अपना उत्तर पा लेता है क्योंकि इसमें जीवन की हर कठिनाई को खोज लिया गया है और जय कर लिया गया है। सचमुच ही इसमें योग-जीवन को साधने का हर निर्देश, हर संकेत संलग्न है, विद्यमान है। श्रीअरविन्द ने इस एक अकेली पुस्तक में अविरल ब्रह्माण्ड को समाविष्ट कर दिया है: यह एक अद्भुत, गरिमापूर्ण और अतुलनीय रचना है, जो “सम्पूर्ण” है।”

माताजी ने हमें यह निर्देश किया है कि हम सावित्री को कैसे पढ़ें? यह तो मानी हुई बात है कि सावित्री एक अलग किस्म की रचना है। लेकिन माताजी हमें प्रोत्साहित करते हुए कहती हैं कि हमें सावित्री को अपनी साधना का अंग बनाकर पढ़ना चाहिए। वे निर्देश करती हैं

“इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम नहीं समझ पा रहे हो, लेकिन इसे हमेशा पढ़ो। तुम पाओगे कि हर बार जब तुम इसे पढ़ते हो, तुम्हारे समक्ष कुछ नवीन तथ्य प्रकाशित होगा। तुम हर बार कुछ नई अनुभूति, नया बोध महसूस करोगे। लेकिन तुम्हें सावित्री को दूसरी किसी पुस्तक या अखबार की तरह नहीं पढ़ना चाहिए। तुम्हें इसे अन्य विचारों से रहित, शान्त और खुले दिमाग से पढ़ना चाहिए, इस पर अपना ध्यान एकाग्र करना चाहिए।

तब उन छपे हुए पन्नों से शब्द, लय, छन्द एवं स्पन्दन सीधे तुम्हें एकाग्र दृष्टि से देखते प्रतीत होंगे, अपनी छाप तुम्हारे हृदय व मन पर अंकित करेंगे और तुम्हारे प्रयास बिना ही वे अपना अर्थ स्वयं ही तुम्हारे सामने खोलते प्रतीत होंगे...।

मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ, माताजी आगे कहती हैं, “जो व्यक्ति कभी भी योग करने का इच्छुक है, उसके लिए सच्चा प्रयास करता है और उसकी ऊर्जा को अपने अन्दर महसूस करता है, वह सावित्री के द्वारा योग की सीढ़ी के अन्तिम सोपान पर चढ़ने योग्य बन जाएगा, उस रहस्य को ढूँढ़ निकालने में सक्षम बनेगा जो “सावित्री” प्रस्तुत करती है और यह सब उपलब्धि



वह गुरु की मदद के बिना पा सकेगा।

साथ ही वह इस योग को किसी भी स्थान पर कर सकने में समर्थ होगा।

वास्तव में सावित्री सर्वोच्च ज्ञान है, समस्त दर्शनों से ऊपर है, मनुष्य के सभी धर्मों से ऊपर ऊँचे स्थान पर है। यह आध्यात्मिक पथ है, यह योग है, तपस्या है, साधना है, अपनी अकेली एकमात्र सत्ता में

सब कुछ है। यह उस साधक को अपने स्पन्दनों से भर देती है जो इन्हें ग्रहण करने की क्षमता रखता है, चेतना के हर स्तर, हर अवस्था से आने वाले सच्चे स्पन्दन। यह अतुलनीय कृति है, जो अपनी परिपूर्णता में सत्य है- वह सत्य जो श्रीअरविन्द पृथ्वी के लिए उतार लाए हैं।

माताजी

बस हमारा काम है अभीप्सा करना, अपने-आपको श्रीमाँकी

ओर खुला रखना, जो सब चीजें उनकी इच्छाके विरुद्ध हैं उन

सबका त्याग करना तथा अपने अंदर उन्हें कार्य करने देना

साथ ही अपने सभी कर्मोंको उनके लिये ही करना और इस

विश्वास के साथ करना कि केवल उनकी शक्ति के सहारे ही हम

उसे कर सकते हैं। अगर हम इस प्रकार खुले रहें तो फिर

यथा समय ज्ञान और अनुभव हमारे पास आ जाएँगे।

2. श्रीमाँ की ओर खुले रहने का मतलब है बराबर ही शांत-स्थिर और प्रसन्न बने रहना तथा दृढ़ विश्वास बनाये रखना—

चंचलहोना नहीं, दुःख करना या हताश होना नहीं, अपने अन्दर

उनकी शक्ति को कार्य करने देना, अपना पथ-प्रदर्शन करने देना, अपने को ज्ञान देने देना, शांति और अनन्द देने देना।

अगर हम अपने को खुला न रख सकें तो फिर उसके लिये निरंतर और पूर्णशांति से यह अभीप्सा करें कि हम उनकी ओर खुल जाएँ।

3. हमें चाहिए कि हम महज श्रीमाँ की सहायता पाने के लिये अपने-आपको विश्वास और भरोसे के साथ खोल दें। बस, यही उनसे अपने को दूर अनुभव न करने का सबसे उत्तम मार्ग है।

श्रीमाँ की तरफ इस खुलने का जीवन्त उदाहरण हमें मिलता है, श्री अरविन्द आश्रम के संस्थापक श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर (चाचाजी) के जीवन से। चाचाजी ने जब पहली बार श्रीमाँ को देखा बस उसी क्षण उन पर अपना सब कुछ हार गए, उन्होंने



श्रीमाँ को अपना तन-मन और धन सब कुछ समर्पित कर दिया। श्रीमाँ और श्रीअरविन्द के प्रति उनका समर्पण हमें सिखाता है कि किस प्रकार भौतिक जगत में रहते हुए, जीवन को पूरी तरह ईश्वर के हाथों सौंपा जा सकता है। श्रीमाँ की आज्ञा से दिल्ली में श्रीअरविन्द आश्रम की स्थापना और आजीवन उसके लिए कार्य करते रहने वाले चाचाजी का जीवन भी देश-प्रेम की भावना से परिपूर्ण था।

देश की आजादी के इस सक्रिय सेनानी ने माँ के आदेशों का पालन करते हुए एक बार भी अपने कार्य के प्रति अहंपूर्ण आसक्ति नहीं दिखाई।

उनकी निष्ठा का ही परिणाम था कि पूर्ण समर्पणद्वारा देश की भौगोलिक आजादी के लिए संघर्ष करने वाला यह सेनानी कब आन्तरिक विकास-पथ का पथिक बन गया उसे ज्ञात भी न हुआ।

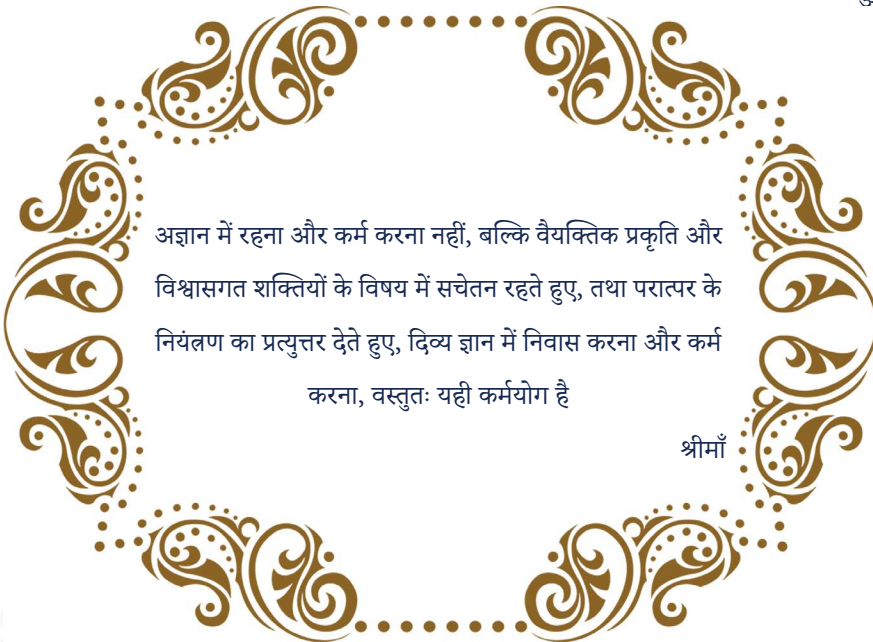
15 अगस्त का दिन भारतीय स्वतंत्रता की घोषणा करता है, साथ ही इसी दिन का श्रीअरविन्द का जन्म दिन भी होना, उसकी गहन प्रतीकात्मक महत्ता साबित करता है।

चाचा जी की प्रेरक जीवन-गाथा से प्रेरित हम भी श्रीमाँ एवं श्रीअरविन्द के योग-पथ के सच्चे पाथिक बनने की अभीप्सा विकसित करें, इस कामना के साथ

कर्मधारा का का यह अंक आपके लिए हाजिर है।

शुभेच्छा के साथ

अपर्णा रॉय



अज्ञान में रहना और कर्म करना नहीं, बल्कि वैयक्तिक प्रकृति और विश्वासगत शक्तियों के विषय में सचेतन रहते हुए, तथा परात्पर के नियंत्रण का प्रत्युत्तर देते हुए, दिव्य ज्ञान में निवास करना और कर्म करना, वस्तुतः यही कर्मयोग है

श्रीमाँ



15 अगस्त 1947 का श्रीअरविन्द का सन्देश

श्रीअरविन्द

15 अगस्त स्वाधीन भारत का जन्मदिन है। यह दिन भारतवर्ष के लिए एक प्राचीन युग का अन्त और एक नवीन युग का प्रारम्भ सूचित करता है। यह दिन केवल हमारे लिए ही नहीं वरन एशिया के लिए और समस्त संसार के लिए भी एक अर्थ रखता है; और वह अर्थ यह है कि इस दिन संसार के राष्ट्र-समाज के अन्दर एक नई राष्ट्र-शक्ति प्रवेश कर रही है जिसमें अगणित संभावनाएँ निहित हैं और जिसे मनुष्य-जाति के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक भविष्य की रचना करने में एक महान कार्य करना है। व्यक्तिगत रूप से तो मुझे इस बात से स्वभावतः ही प्रसन्नता होगी कि जो दिन, मेरा अपना जन्मदिन होने के कारण, केवल मेरे लिए ही स्मरणीय था और जिसे वे ही लोग प्रतिवर्ष मनाया करते थे जिन्होंने जीवन-सम्बन्धी मेरी शिक्षा को स्वीकार किया है, उसी दिन को आज इतना विशाल अर्थ प्राप्त हुआ है। एक अध्यात्मवादी के नाते मैं इन दोनों दिनों के एक हो जाने को केवल एक संयोग या आकस्मिक घटना नहीं मानता, बल्कि मैं यह मानता हूँ कि इसके द्वारा भागवत शक्ति ने –जो मेरा पथ-प्रदर्शन करती है, उस कार्य के लिए अपनी स्वीकृति दे दी है तथा उस पर अपने आशीर्वाद की मुहर लगा दी है जिसको लेकर मैंने अपना जीवन आरम्भ किया था।

वास्तव में संसार के वे प्रायः सभी आन्दोलन, जिन्हें मैंने अपने जीवन-काल में ही सफल होते हुए देखने की आशा की थी और जो उस समय असंभव स्वप्न से ही प्रतीत होते थे, आज के दिन मैं देख रहा हूँ कि, या तो अपनी सफलता के समीप पहुँच रहे हैं या उनका कार्य आरम्भ हो गया है और वे अपनी सफलता के मार्ग पर अग्रसर हो रहे हैं।

आज के इस महान अवसर पर मुझसे एक सन्देश माँगा गया है। परन्तु अभी सम्भवतः मैं कोई सन्देश देने की स्थिति में नहीं हूँ। अधिक से अधिक आज मैं उन उद्देश्यों और आदर्शों की व्यक्तिगत रूप से घोषणा भर कर सकता हूँ जिन्हें मैंने अपने बाल्य और युवाकाल में अपनाया था और जिन्हें अब मैं सफलता की ओर जाते हुए देख रहा हूँ; क्योंकि भारत की स्वाधीनता के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध है-वे उस कार्य का ही एक अंग हैं जिसे मैं भारत का भावी कार्य मानता हूँ और जिसमें भारत नेता का स्थान ग्रहण किये बिना नहीं रह सकता। मैं निरन्तर यह मानता और कहता आ रहा हूँ कि भारत उठ रहा है और वह केवल अपने ही भौतिक स्वार्थों को सिद्ध करने के लिए नहीं, अपनी ही प्रसारता, महत्ता, सामर्थ्य और सम्पदा-अर्जन करने के



लिए नहीं- यद्यपि इन सबकी भी उसे उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, और निश्चय ही अन्य राष्ट्रों की तरह दूसरी-दूसरी जातियों पर अधिकार स्थापित करने के लिए नहीं बल्कि वह भगवान के लिए, जगत के लिए समस्त मानव-जाति के सहायक और नेता के रूप में जीवन-यापन करने के लिए उठ रहा है। वे उद्देश्य और आदर्श अपने स्वाभाविक क्रम में इस प्रकार हैं- (1) एक क्रांति, जिसके द्वारा भारत को स्वतंत्रता और एकता प्राप्त हो; - (2) एशिया का पुनः जागरित होना और स्वाधीन होना तथा मानव-सभ्यता की क्रमोन्नति के लिए उसने एक समय जैसे महान कार्य किया था, वैसे ही फिर से उसका कार्य करने लगना; - (3) मनुष्य जाति के लिए एक नवीनतर, महत्तर, उज्ज्वलतर और उन्नततर जीवनधारा का विकास, जो अपनी सम्पूर्ण सिद्धि के लिए बाह्यतः सभी जातियों की पृथक्-पृथक् सत्ता के एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय एकीकरण पर निर्भर करेगा जो एकीकरण विभिन्न जातियों के राष्ट्रीय जीवन को तो सुरक्षित और अक्षुण्ण रखेगा पर उन्हें एक सर्वोपरि और अन्तिम एकता के अन्दर एक साथ बाँध रखेगा; - (4) भारत का समस्त मनुष्य जाति को अपना आध्यात्मिक ज्ञान और जीवन को आध्यात्मिक बनाने की साधना प्रदान करना; और अन्त में (5) क्रम-विकास के अन्दर एक पग और आगे बढ़ जाना, जिसके फलस्वरूप चेतना एक उच्चतर स्तर में ऊपर उठ जाएगी और जीवन की उन अगणित समस्याओं का समाधान होना आरम्भ हो जाएगा। जो मनुष्य को तब से व्यथित और विभ्रान्त कर रही हैं जब से उसने व्यक्तिगत पूर्णता तथा सर्वांगसुन्दर समाज के विषय में चिन्तन करना और स्वप्न देखना आरम्भ किया था।

भारत स्वतन्त्र हो गया है पर उसने एकता नहीं प्राप्त की है, केवल टूटी-फूटी, छिन्न-भिन्न स्वतन्त्रता ही उसने प्राप्त की है। एक समय तो प्रायः ऐसा ही मालूम होता था कि वह फिर से अलग-अलग राज्यों की उस अस्तव्यस्त अवस्था में ही जा गिरेगा जो अवस्था अंग्रेजों की विजय के समय थी। परन्तु सौभाग्यवश अब एक ऐसी प्रबल सम्भावना उत्पन्न हो गयी है जो उसे उस विपज्जनक अवस्था में गिर जाने से बचा लेगी। संविधान-परिषद् की कौशलपूर्ण प्रबल नीति ने यह सम्भव बना दिया है कि पददलित जातियों का प्रश्न बिना किसी विरोध या मतभेद के हल हो जाएगा परन्तु हिन्दू और मुसलमानों का पुराना साम्प्रदायिक विभेद मानो इतना घना हो गया है कि उसने देश के एक स्थायी राजनीतिक विभाजन का ही रूप धारण कर लिया है। हम आशा करते हैं कि कांग्रेस और हमारे देशवासी इस निर्णय को स्थायी निर्णय नहीं मानेंगे अथवा एक सामयिक व्यवस्था से अधिक और कुछ नहीं समझेंगे। क्योंकि, अगर यह विभाजन बराबर बना रहा तो भारत बुरी तरह दुर्बल हो सकता है और यहाँ तक कि पंगु भी हो सकता है; फिर गृह-कलह की सम्भावना बराबर ही बनी रह सकती है और यह भी संभव हो सकता है कि इस पर बाहर से आक्रमण हो और यहाँ फिर से विदेशी राज्य स्थापित हो जाए। अतएव देश का विभाजन अवश्य दूर होना चाहिए, आशा है कि वह या तो विरोध की तीव्रता के धीरे-धीरे कम होने से दूर होगा या शांति तथा मेल-मिलाप की आवश्यकता को



क्रमशः हृदयंगम करने से होगा अथवा एक कार्य को एक साथ मिलकर करने की सतत आवश्यकता को, यहाँ तक कि उस उद्देश्य की सिद्धि के लिए एकत्व-साधक यन्त्र की आवश्यकता को अनुभव करने से होगा। इस तरह एकता स्थापित हो सकती है, भले ही उसका रूप चाहे जो हो- उसके वास्तविक स्वरूप का कोई व्यावहारिक मूल्य भले ही हो, तत्त्वतः उसका कोई मूल्य नहीं। परन्तु चाहे जिस किसी उपाय से क्यों न हो, विभाजन अवश्य दूर होना चाहिए और दूर होकर ही रहेगा। क्योंकि यदि ऐसा न हो तो भारत का भविष्य बुरी तरह क्षय हो सकता है और व्यर्थ तक हो सकता है। परन्तु वैसा कभी नहीं होने देना चाहिए।

एशिया जग गया है और उसके अधिकांश भाग स्वतन्त्र हो गए हैं अथवा इस समय स्वतन्त्र हो रहे हैं; उसके अन्य भाग, जो अभी परतन्त्र हैं, चाहे जितने भी संघर्ष में से क्यों न हो, वे भी स्वतन्त्रता की ओर अग्रसर हो रहे हैं बस, थोड़ा सा ही कार्य शेष है और वह आज या कल पूरा हो जाएगा। इस क्षेत्र में भी भारत को कुछ कार्य करना है और उस कार्य को उसने एक ऐसी शक्ति और योग्यता के साथ करना आरम्भ कर दिया है कि वह इस बात को सूचित कर रही हैं कि उसके अन्दर क्या-क्या सम्भावनाएँ निहित हैं तथा विश्व की राष्ट्र-परिषद् में वह कौन सा स्थान ग्रहण करेगा। मनुष्य जाति का एकीकरण आरम्भ हो गया है, यद्यपि उसका प्रारम्भ दोषपूर्ण है, एक बाह्य व्यवस्था स्थापित हुई है परन्तु महान कठिनाइयों के विरुद्ध संघर्ष करना पड़ रहा है। परन्तु वेग उसमें है, और यदि इतिहास के अनुभव को अपना पथ- प्रदर्शक बनाया जाए तो वह अनिवार्य रूप से तब तक बढ़ता जाएगा। जब तक वह अपना काम पूरा नहीं कर लेता। इस विषय में भी भारत ने एक महत्त्वपूर्ण कार्य करना आरम्भ कर दिया है और, यदि वह उस विशालतर राजनीतिज्ञता को विकसित करे जो आधुनिक घटनाओं तथा निकटतर सम्भावनाओं से ही सीमित नहीं होती बल्कि भविष्य को भी देखती तथा उसे निकटतर ले आती है तो, उसकी उपस्थिति इस बात को स्पष्ट दिखा सकती है कि एक मंथर और सशंक गति तथा एक क्षिप्र और निर्भीक गति में क्या अन्तर होता है। सम्भव है कि इस क्षेत्र में कोई उपद्रव हठात् उठ खड़ा हो और जो कुछ किया जा रहा है उसे रोक दे या नष्ट कर दे, परन्तु फिर भी इसका अन्तिम फल सुनिश्चित है क्योंकि, चाहे जो हो, एकीकरण, प्रकृति की धारा के अन्दर एक आवश्यक चीज है, एक अनिवार्य गति है और इसकी संसिद्धि के विषय में निस्सन्देह भविष्यवाणी की जा सकती है। इसकी आवश्यकता सभी राष्ट्रों को है, यह भी स्पष्ट है, क्योंकि इसके बिना छोटी-छोटी जातियों की स्वतन्त्रता अब कभी निरापद नहीं रह सकती और बड़े-बड़े तथा शक्तिशाली राष्ट्र तक भी वास्तव में कभी सुरक्षित नहीं रह सकते। अगर भारत विभक्त बना रहा तो स्वयं अपनी रक्षा के विषय में भी निस्सन्देह नहीं हो सकता। अतएव इसी बात में सबकी भलाई है कि एकता स्थापित हो। एकमात्र मनुष्य की घोर असमर्थता तथा मूढ़ स्वार्थपरता ही इसे रोक सकती है।



मनुष्य के इन दुर्गुणों के सामने कहते हैं कि देवताओं का प्रयास भी व्यर्थ हो जाता है परन्तु प्रकृति की आवश्यकता तथा भागवत संकल्प के विरुद्ध ये चीजें भी बराबर नहीं टिक सकतीं। इस तरह राष्ट्रीयता अपनी पूर्णता को प्राप्त करेगी। एक अन्तर्राष्ट्रीय भाव और दृष्टि उत्पन्न होगी तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्थाएँ और संस्थाएँ गठित होंगी। यहाँ तक कि ऐसे परिवर्तन भी उपस्थित हो सकते हैं जिनके कारण एक आदमी एक साथ ही दो देशों या कई देशों की नागरिकता को प्राप्त करें और परिवर्तन की प्रक्रिया के अन्दर विभिन्न देशों की संस्कृतियाँ स्वेच्छापूर्वक एक दूसरे के साथ घुल-मिलकर एक हो जाएँ और राष्ट्रीयता का भाव अपनी युद्ध प्रियता को त्यागकर यह अनुभव करने लगे कि वह अपनी निजी दृष्टि को अक्षुण्ण रखते हुए भी इन सब चीजों को पूर्ण माला में ग्रहण कर सकता है। एकता का एक नवीन भाव समस्त मनुष्य-जाति को अभिभूत कर डालेगा।

भारत ने सारे संसार को अपना आध्यात्मिक दान देना आरम्भ कर दिया है। भारत की आध्यात्मिकता यूरोप और अमेरिका में आधिकाधिक माला में प्रवेश कर रही है। इसकी गति दिन-दिन बढ़ती ही जाएगी। इस युग की दुर्घटनाओं के बीच लोगों की आँखें आशा के साथ आधिकाधिक उसकी ओर मुड़ रही हैं और लोग केवल उसके शास्त्रों का ही नहीं वरन उसकी आंतरिक और आध्यात्मिक साधना का भी आधिकाधिक आश्रय ग्रहण कर रहे हैं।

अब जो शेष है वह अभी तक एक व्यक्तिगत आशा, भावना और आदर्श की ही बात है। पर इसको भी भारत में तथा पाश्चात्य देशों में उन लोगों ने धीरे-धीरे ग्रहण करना आरम्भ कर दिया है जिनकी बुद्धि भविष्य को देखने में समर्थ है। अवश्य ही मानव-प्रयास के अन्यान्य क्षेत्रों की अपेक्षा इस क्षेत्र में कहीं अधिक कठिनाइयाँ मौजूद हैं, परन्तु कठिनाइयाँ पार करने के लिए ही बनी हैं और यदि इसके लिए परम प्रभु ने संकल्प किया है तो वे पार की जाएँगी। यहाँ भी, अगर यह क्रम-विकास साधित होने को है तो, और, चूँकि यह आत्मा में तथा आंतर चेतना में क्रमशः वर्द्धित होने से साधित हो सकता है इसलिए इसका भी सूलपात भारत में ही हो सकता है और यद्यपि इसका क्षेत्र सारा विश्व होगा फिर भी इसका केन्द्र भारत ही हो सकता है।

आज भारत के इस स्वाधीनता-दिवस के साथ मैं इन्हीं भावनाओं को युक्त कर रहा हूँ। पर ये सब भावनाएँ सिद्ध होंगी या नहीं या कहाँ तक अथवा कितनी शीघ्र सिद्ध होंगी, यह सब इस नवीन और स्वतन्त्र भारत पर निर्भर करता है।



जन्म का चमत्कार

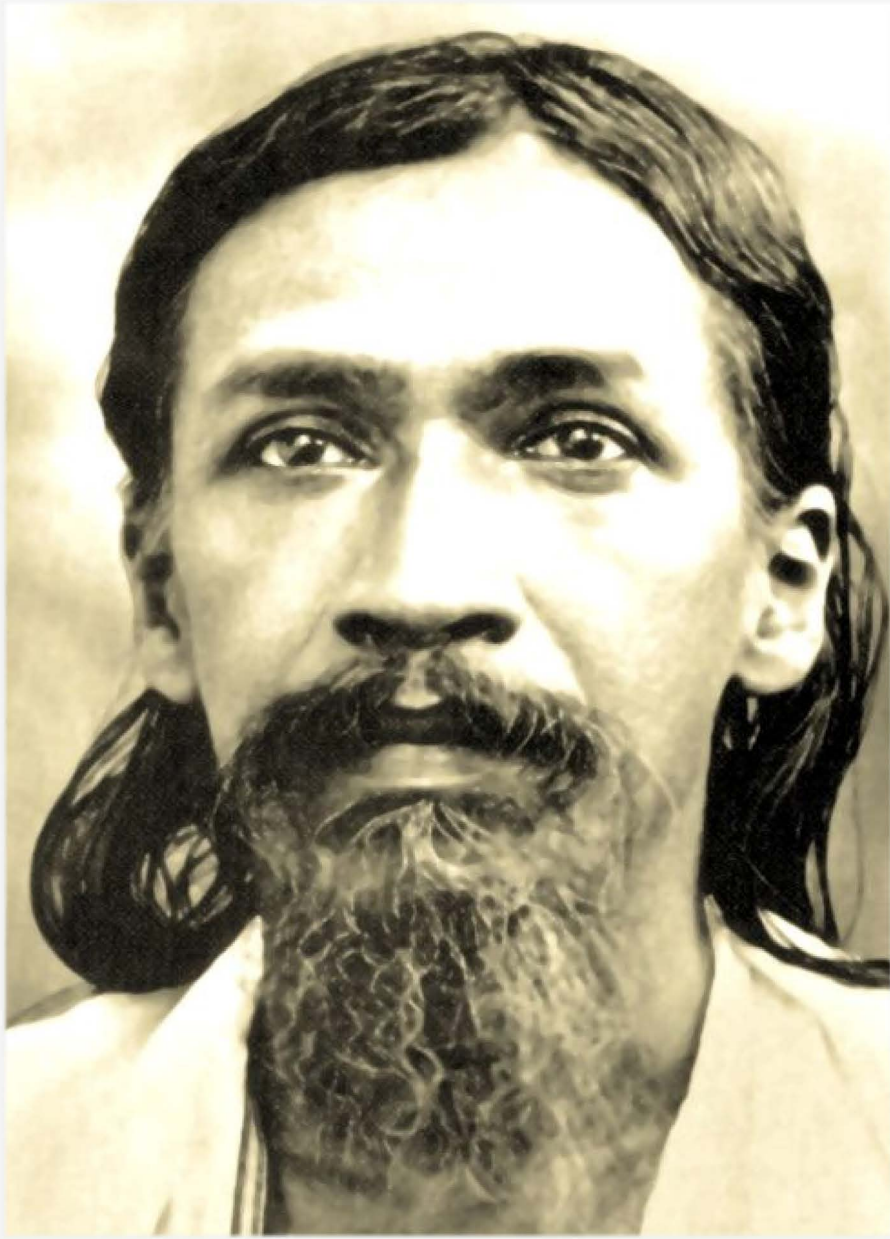
श्रीअरविन्द

काल के गतिक्रम में मैंने देखा अपने आत्मा को एक यात्री के समान;
जो जन्मान्तरो से चलता रहा है ब्रह्माण्ड की राहों पर,
गहराइयों में धूमिल मलिन और शिखरों पर ज्योतिर्मय,
यह विकसित हुआ कृमि से देवत्व में।
शाश्वत अग्नि की एक चिनगारी यह आत्मा, आया
निर्मित करने हेतु एक गृह उस 'अजन्मे' के लिए जड़तत्व में।
अचेतन सूर्यहीन महानिशा ने पायी एक प्रकाश किरण,
मूक और परित्यक्त पदार्थों के जड़ बीज में
जीवन हुआ स्पन्दित और विचार ने एक देदीप्यमान स्वरूप का किया रेखांकन
जिससे नितान्त निष्प्राण निस्पन्द पृथ्वी पर कर सके भ्रमण,
औ स्वेच्छाधारी निद्रित प्रकृति में हो सके उत्पन्न
एक विचारशील प्राणी जिसमें हो आशा का उदगार और जो कर सके प्रेम।
अभी भी मंद गति से घटित हो रहा है यह चमत्कार,
पंक और पाषाण में से होकर उस अज-अमर के क्रमिक जन्म का।

अनुवाद-विमला गुप्ता

महानिशा का तीर्थयात्री





जन्मदिन पर स्नेहाशीष

श्रीअरविन्द

आवर्तन वर्षों का जो प्रसाद-गौरव मय,
जन्म दिवस की ऊषा एक बार फिर लाए।
यौवन-उर्मि-शिखर पर दिखे तुम्हारा यौवन
एक लहर जो आज उठ रही उर्ध्वोन्मुख हो।
सागर तल पर शत-शत लहरों का है जमघट,
सागर के विस्तार विपुल पर एक तरंग हमारा जीवन।
नियमित छंद ताल पर चलती सागर तट को,
मिलन हेतु ऐसा ही निश्चित अपने जीवन की तरंग हो।
शक्ति करे जो संचालित वह सिन्धु-शक्ति है,
जो अजेय है, परम सनातन और मुक्त अनुसरण परंपरा का,
अपरिहार्य पद्धति से सदा किया करती है।
हम भी शक्ति-सनातन से ले जाए जाते,
चाहे जिस भी लक्ष्य ओर उसकी इच्छा से।
वह है अधिकृत किए हमारे परिचालन को,
खुली हुई पालों को भरती है उसकी सासें बलशाली
यौवन के लावण्य और ताकत में, जागो
अनुशीलन सागर के दूर तटों का करना।
करके तुम विश्वास मार्ग निर्देशन हित चालक की वाणी,
हमको जो घेरे रहता है प्रभु करुणा से।



आवर्तन वर्षों का जो प्रसाद-गौरव मय,
जन्म दिवस की ऊषा एक बार फिर लाए।
यौवन-उर्मि-शिखर पर दिखे तुम्हारा यौवन
एक लहर जो आज उठ रही उध्वोन्मुख हो।
सागर तल पर शत-शत लहरों का है जमघट,
सागर के विस्तार विपुल पर एक तरंग हमारा जीवन।
नियमित छंद ताल पर चलती सागर तट को,
मिलन हेतु ऐसा ही निश्चित अपने जीवन की तरंग हो।
शक्ति करे जो संचालित वह सिन्धु-शक्ति है,
जो अजेय है, परम सनातन और मुक्त अनुसरण परंपरा का,
अपरिहार्य पद्धति से सदा किया करती है।
हम भी शक्ति-सनातन से ले जाए जाते,
चाहे जिस भी लक्ष्य ओर उसकी इच्छा से।
वह है अधिकृत किए हमारे परिचालन को,
खुली हुई पालों को भरती है उसकी सासें बलशाली
यौवन के लावण्य और ताकत में, जागो
अनुशीलन सागर के दूर तटों का करना।
करके तुम विश्वास मार्ग निर्देशन हित चालक की वाणी,
हमको जो घेरे रहता है प्रभु करुणा से।
खुशी मनाओ डरो न ऊंची लहरों से तुम।
जो गरजे तूफान, हवाएँ जो झकझोरें!
सदा हमारा चालक पकड़े है पतवार कड़े हाथों से,
उसकी आखों में तो नीद नहीं आती है।
विस्तृत महासिंधु के यदि तरंग-गह्वर में,



गगन करे अवरोध हिलोरो के निर्झर गण ।
कभी न डरना, क्योंकि हमारा सूर्य वहां है ।
संग तुम्हारे सदा, रात में भी, दिन में भी ।
दुर्निवार प्लावन में जो भी डूबे हैं वे
कहाँ डूब जाते हैं? उसके वक्षस्थल में ।
जो देता कुछ की जय, सुख को और ऋद्धि को,
कुछ जन को विश्राम परम का लाभ दे रहा ।
पर तुम देख रहे प्रोज्ज्वल दिवसों को जो कर रहे प्रतीक्षा,
झंझावातों वर्षा के ताण्डव नर्तन में ऊपर, पार में ।
अंतर की आंखों से नियति लखी मैंने तेरी प्रसन्नतर,
जो भास्वत, द्युतिमय कर देती, तेरा रूप और तेरा तन ।
उसकी कृपा भरोसा रखना, आशा करो उसी की इच्छा,
उसको करने दो नेतृत्व यद्यपि वे छुप करते संचालन ।
जो कुछ घटता है उसमें तुम देखो उनको, करें पूर्ण वे,
जिस के लिए तुम्हारा जन्म हुआ धरती पर ।

अनुवाद : देवदत्त



छोटी बातें-बड़े महत्त्व

सुरेन्द्रनाथ जौहर 'फ़कीर'

एक बार आश्रम के बच्चों ने माताजी से कहा, 'माँ हमें रविवार को छुट्टी चाहिये। माताजी बोली,- 'क्यों? क्या दूसरे दिनों में तुम्हें छुट्टी नहीं होती?' छोटी-सी बात है।

किन्तु उस पर हम गहराई से सोचें, तो सोचते ही चले जायेंगे। शायद माताजी कहना चाहती हों कि दुनिया का काम कभी बन्द थोड़े ही होता है। सूर्य छुट्टी नहीं लेता, नदियाँ छुट्टी नहीं लेती; किन्तु हम छुट्टी चाहते हैं,- क्यों? हम हॉकी खेल रहे हैं; एक घण्टे से ज्यादा नहीं खेल सकते, थक जाते हैं, दो-चार घण्टे से अधिक नहीं पढ़ सकते, 'बोर' हो जाते हैं। आखिर क्यों, क्या कभी तुमने सोचा है? यह थकान और बोरियत हममें आती कहाँ से है? यह होता इसलिए है कि हम 'आनन्द से कटे हुए होते हैं'। 'हॉलीडे' चाहते हैं; इसका मतलब हुआ केवल वही हमारे लिए आनन्द का दिन है। बाकी छः दिन आनन्द के नहीं। किन्तु जब हम भगवान् के साथ जुड़े हुए होते हैं, उनमें ही रहते हैं, तो हमारे लिए हर दिन छुट्टी का और आनन्द का दिन बन जाता है। हमारा उठना-बैठना, खाना-पीना, खेलना, पढ़ाई, काम, सभी कुछ, छुट्टी मनाने की तरह हो जाते हैं। बचपन से ही यदि इस बात की समझ आ जाये तो कितना अच्छा हो। बच्चे इस छोटी-सी बात को गहराई से सोचें तो फिर रोज़ उनके लिए छुट्टी ही छुट्टी है। और एक छोटी-सी बात याद आयी। अभी एक अफ़सर के पास गया था। आश्रम का कुछ काम था। वहाँ एक सज्जन मिले। मेरा नाम सुनते ही उछल पड़े। बोले, 'भाई वाह, क्या मुलाकात हुई-याद है मेरी आपको? मैंने पच्चीस साल पहले आपके स्कूल में अपना बच्चा दाखिल किया था, तब आपसे मुलाकात हुई थी।' मैंने कहा, 'वाह साहब, याद क्यों नहीं? लेकिन उस दिन के बाद तो आप कभी मिले नहीं? अच्छी दोस्ती निभाई आपने?' उनका जवाब माकूल था। बोले, 'अजी, 'दोस्ती दूर की, खटाई अमचूर की।' ठीक ही तो था। शायद पच्चीस साल से नहीं मिले, तभी अब तक दोस्ती बनी हुई थी। मिलने में हमें बड़ा आनन्द आ रहा था। नज़दीक की दोस्ती तो आप जानते ही हैं, बार-बार की मुलाकात से दोस्ती का लुप्त जाता रहता है, यह भी दुनियाँ का ढर्रा है। केवल एक दोस्ती है दुनियाँ में, जो एक बार जुड़ती है, तो बार-बार यहाँ तक कि प्रतिपल मिलते रहने से भी नहीं टूटती और न फीकी पड़ती है, वह है भगवान् से दोस्ती! भला आप एक बार उन्हें दोस्त बना कर तो देखें। और एक छोटी-सी बात, जो मुझे ज़िन्दगी भर के लिए मार्ग-दर्शक रही, और बतलाऊँ! पहले एक कहानी सुनिये अकबर के दरबार



में 'नौ' मिनिस्टर' थे, जो 'नवरत्न' कहलाते थे। उन सब में बीरबल सब से अधिक लोकप्रिय थे, क्योंकि वे हरदम पते की बात करते थे। एक दिन की बात है कि अकबर के दरबार में एक जुलाहा आया। तब तो कपड़े की मिलें नहीं हुआ करती थीं। बादशाह को भेंट करने के लिए वह बड़े शौक से एक बहुत अच्छी चादर ले आया था। यह बेहतरीन नज़राना पाकर अकबर खुश हुए। जुलाहे ने कहा, 'आलमपनाह ज़रा खोलकर और ओढ़कर तो देखिये!'

बड़े शौक से अकबर बादशाह लेटे और चादर ओढ़ी। किन्तु यह क्या चादर से पाँव ढँकते तो सिर खुला रह जाता, और सिर ढँकते तो पाँव बाहर निकल आते। इतनी सुन्दर चादर, और पूरी न आये। इसका इलाज क्या है? बुलाओ मिनिस्ट्रों को! आखिर समस्याओं को हल वे न करें तो उन्हें किस लिए पाल रखा है। एक वज़ीर आया। देखा, सोचने लगा-कुछ समझ में नहीं आया, दूसरा बुलाया गया। उसने सोचकर बतलाया, 'इस चादर में जोड़ लगा दिया जाये।' -बिल्कुल नहीं, इतनी सुन्दर चादर में जोड़-जाड़। 'बादशाह को यह बिल्कुल पसंद नहीं आया। फिर, तीसरा आया, फिर चौथा, पाँचवाँ, छठा, किन्तु किसी का इलाज बादशाह को पसंद ही नहीं आता था। सबको बेवकूफ़, नालायक कहकर भागा दिया बादशाह ने। अब रह गये केवल बीरबल। पूछा, 'कहाँ है बीरबल? बुलाओ!' बीरबल आये! बादशाह ने अपनी समस्या सामने रखी, बोले, बताओ चादर पूरी कैसे पड़ेगी?' बीरबल ले कहा, 'शहंशाह, इसमें दोष तो आप ही का है! 'कैसे?'

'माँ की गोद में आप कैसे लेटते थे?

'घुटनों को मोड़कर!'

'तो वैसे ही लेटिये!'

'क्यों?'

'हुज़ूर, जितनी आपके पास धन-दौलत है, उसी हिसाब से तो आप राज चलायेंगे! उसी प्रकार आप अपनी चादर के मुताबिक़ पाँव फैलाइये! आप सोते हैं, तो यह ज़रूरी थोड़े ही है कि आप, टाँगें पूरी फैलाकर सोयें! उतने पैर पसारिये, जितनी चादर होय!' वाक़ई में यह था समस्या का सही हल! अकबर को पसंद आ गया।

वैसे यह भी छोटी-सी बात है। जितनी आपके पास है, उसके हिसाब से ही आप खर्च करें! जितनी फ़ौज आपके पास है, उसी के अनुपात में आपके पास हिम्मत हो; जितनी बुद्धि आपके पास है, उतना ही काम आप करें। यह तो है सधारण सी बात किन्तु इसे यदि हम अपने जीवन में उतार लें तो हमारे सवालों और हमारी ज़रूरतों के हल आसान हो सकते हैं।

खर्च की जब बात आती है, तो एक संस्मरण याद आता है, जो मैंने अपने पल्ले बाँध रखा है। एक बार मैं महात्मा हंसराज जी के पास गया था। बातचीत में उन्होंने अपने जीवन का एक राज़ बतलाया और कहा, When you want anything,



you first ask yourself-can I do without it?'- यानि 'जब भी तुम्हें किसी चीज़ की इच्छा हो तो पहले अपने-आपसे पूछो- क्या इसके बग़ैर गुज़ारा हो सकता है?' इस प्रकार की छोटी-छोटी बातें ध्यान में रखें और गहराई से उन पर सोचते रहें तो वे ही जीवन में बड़े काम की सिद्ध होती हैं।

चाचाजी की मधुर कहानियाँ एंव प्रेरक प्रसंग

निश्चय ही पुकार और खींचने में बड़ा अन्तर होता है। सहायता के लिए तुम बराबर ही पुकार सकते हो और पुकारना ही चाहिए और फिर उत्तर आएगा तुम्हारी ग्रहण करने और हजम करने की क्षमता के अनुपात में ही। खींचना तो एक स्वार्थपूर्ण क्रिया है जो तुम्हारी क्षमता की अपेक्षा अत्यधिक शक्तियों को उतार सकती है और इस तरह वे हानिकारक हो सकती हैं।

श्रीअरविन्द

श्रीमाँ

श्रीअरविन्द हमें बतलाने आये थे-
“सत्य को पाने के लिए पार्थिवता को
छोड़ना आवश्यक नहीं है, आत्मा की
प्राप्ति के लिए जीवन का त्याग जरूरी
नहीं है, दिव्यता के साथ सम्बन्ध
जोड़ने के लिए दुनिया को न ही
सीमित विश्वासों के साथ जीने की।
भगवान हर कहीं, हर वस्तु में है
और यदि वह गुप्त है, तो इसीलिए
कि हम उसे खोजने का कष्ट उठाना
नहीं चाहते।”

कर्मधारा 1972



सावित्री एक संक्षिप्त परिचय

श्रीमाँ

एक उत्कृष्ट विद्वान् और महान् योगी श्री कृष्णप्रेम ने सावित्री की गहन महत्ता को समझा और पहचाना था। उन्होंने लिखा था-

“श्रीअरविन्द ने उस खाई को पाट दिया जो मानवी अन्तःकरण में सदियों से मुँह बाए खड़ी थी। प्राचीन काल में कविता सबसे ऊपर एक ईश्वरीय ज्ञान थी, दैवी सन्देश थी। इसकी विषय-वस्तु में वह शाश्वत सत्य प्रकट होता था जो सबके हृदय में निवास करता है। कवि दृष्टा था, देवदूत था, एक जादूगर था और उसकी वाणी एक वशीकरण मंत्र थी।

धीरे-धीरे समय के आत्म-दम्भ(विभाजित मन,यानी आत्म-हंता) की वृत्ति बढ़ती गई। एक दो में बँट गया और दिमाग ने स्वयं को हृदय से पृथक् मान लिया, ज्ञान से भावना पृथक् हो गई।

सावित्री न तो विषयमूलक कल्पना है, ना ही एक दार्शनिक विचार वरन् विश्व के असली आन्तरिक सद-स्वरूप का एक अन्तर्दर्शन है, एक प्रकटन है –भूः,भुवः स्वः विश्वों की वह सीढ़ी जो हमारी दृष्टि के समक्ष स्वयं को प्रकट कर देती है। ऊपर के प्रकाश लोक, नीचे के अन्धकार लोक और फिर हम जीवन को अनवरत चक्राकार घूमते भी देख लेते हैं।

साथ ही यह कृति अत्यन्त महत्ता का शुभ-लक्षण और आशा है, जो निराशा और अन्धकार के इस युग में कविता बनकर प्रकट हुई है। आइए, हम इस “उषा”का स्वागत करें।”

सावित्री के विषय में उसके सन्देश को जानने वाला मातृ माताजी से अधिक अधिकारी और कौन होगा? वे इसके विषय में कहती हैं -

“सावित्री एक प्राकट्य है,देवी सन्देश है, ध्यान है, शाश्वत की खोज है। सावित्री को पढ़ना वास्तव में योग का अभ्यास करना है, आध्यात्मिक एकाग्रता पाना है व्यक्ति इसमें वह सब कुछ पा सकता है जो भगवान को साक्षात् करने के लिए आवश्यक है। योग का हर पक्ष, हर पहलू,उसमें आगे बढ़ने का हर कदम उपलब्ध है।

साथ ही अन्य सभी योग-क्रियाओं के रहस्यों का भी इसमें समावेश है। यदि कोई बहुत गम्भीरता पूर्वक इसकी हर पंक्ति में उद्घाटित सत्य का अनुसरण करे तो वह निश्चय ही अतिमानसिक योग के रूपान्तर तक पहुँच जाएगा। यह सचमुच ही अचूक



पथ-प्रदर्शक है जो कभी अपने मदद का परित्याग नहीं करता और सदा उसके समीप उपस्थित है जो इस मार्ग का अनुसरण करना चाहता है। सावित्री की प्रत्येक पंक्ति एक सिद्ध मंत्र की तरह है और मैं इसे दोहराया करती हूँ। शब्द इस ढंग से व्यक्त एवं व्यवस्थित किये गये हैं कि उनके लय की गूँज हमें मूल ध्वनि तक ले जाती है, जो “ओम्” है।

“सावित्री श्री अरविन्द का पूर्ण रूपान्तर योग है। यह योग प्रथम बार पृथ्वी चेतना तक आया है। यह आध्यात्मिक उत्कर्ष की अनुपम कृति है, अद्वितीय रचना है। जितना अधिक तुम इसके सान्निध्य में प्रवेश करते हो, उतना ही ऊपर उठा लिए जाते हो। यह सर्वोत्कृष्ट अमूल्य देन है जो श्रीअरविन्द ने मनुष्य को प्रदान की है। अकेली यह रचना ही तुम्हें सबसे ऊपरी सीढ़ी से जोड़ देने के लिए पर्याप्त है। यदि तुम सचमुच इस पर ध्यान एकाग्र करो तो समस्त सम्भावित सहायता तुम्हें उसके द्वारा मिलेगी। वे लोग जो योगपथ का अनुसरण करना चाहते हैं उन्हें सावित्री से ठोस मदद मिली है मानो स्वयं भगवान तुम्हें हाथ पकड़कर तुम्हारे लक्ष्य की ओर ले जा रहे हैं। प्रत्येक प्रश्न, चाहे वह कितना भी व्यक्तिगत क्यों न हो, सावित्री में अपना उत्तर पा लेता है क्योंकि इसमें जीवन की हर कठिनाई को खोज लिया गया है और जय कर लिया गया है। सचमुच ही इसमें योग-जीवन को साधने का हर निर्देश, हर संकेत संलग्न है, विद्यमान है। श्रीअरविन्द ने इस एक अकेली पुस्तक में अविरल ब्रह्माण्ड को समाविष्ट कर दिया है: यह एक अद्भुत, गरिमापूर्ण और अतुलनीय रचना है, जो “सम्पूर्ण” है।”

माताजी ने हमें यह निर्देश किया है कि हम सावित्री को कैसे पढ़ें? यह तो मानी हुई बात है कि सावित्री एक अलग किस्म की रचना है। लेकिन माताजी हमें प्रोत्साहित करते हुए कहती हैं कि हमें सावित्री को अपनी साधना का अंग बनाकर पढ़ना चाहिए। वे निर्देश करती हैं

“इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम नहीं समझ पा रहे हो, लेकिन इसे हमेशा पढ़ो। तुम पाओगे कि हर बार जब तुम इसे पढ़ते हो, तुम्हारे समक्ष कुछ नवीन तथ्य प्रकाशित होगा। तुम हर बार कुछ नई अनुभूति, नया बोध महसूस करोगे। लेकिन तुम्हें सावित्री को दूसरी किसी पुस्तक या अखबार की तरह नहीं पढ़ना चाहिए। तुम्हें इसे अन्य विचारों से रहित, शान्त और खुले दिमाग से पढ़ना चाहिए, इस पर अपना ध्यान एकाग्र करना चाहिए।

तब उन छपे हुए पत्रों से शब्द, लय, छन्द एवं स्पन्दन सीधे तुम्हें एकाग्र दृष्टि से देखते प्रतीत होंगे, अपनी छाप तुम्हारे हृदय व मन पर अंकित करेंगे और तुम्हारे प्रयास बिना ही वे अपना अर्थ स्वयं ही तुम्हारे सामने खोलते प्रतीत होंगे।”

“मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ”, माताजी कहती हैं, “जो व्यक्ति कभी भी योग करने का इच्छुक है, उसके लिए सच्चा प्रयास करता है और उसकी ऊर्जा को अपने अन्दर महसूस करता है, वह सावित्री के द्वारा योग की सीढ़ी के अन्तिम सोपान पर चढ़ने योग्य बन जाएगा, उस रहस्य को ढूँढ़ निकालने में सक्षम बनेगा जो “सावित्री” प्रस्तुत करती है और यह सब उपलब्धि वह गुरु



की मदद के बिना पा सकेगा।

साथ ही वह इस योग को किसी भी स्थान पर कर सकने में समर्थ होगा।”

“वास्तव में सावित्री सर्वोच्च ज्ञान है, समस्त दर्शनों से ऊपर है, मनुष्य के सभी धर्मों से ऊपर ऊँचे स्थान पर है। यह आध्यात्मिक पथ है, यह योग है, तपस्या है, साधना है, अपनी अकेली एकमाल सत्ता में सब कुछ है यह उस साधक को अपने स्पन्दनों से भर देती हैं जो इन्हें ग्रहण करने की क्षमता रखता है-चेतना के हर स्तर, हर अवस्था से आने वाले सच्चे स्पन्दन। यह अतुलनीय कृति है, जो अपनी परिपूर्णता में सत्य है- वह सत्य जो श्रीअरविन्द पृथ्वी के लिए उतार लाए हैं।”

श्रीमाँ

भाग-2

आगमन (Advent)

“एक आख्यान और एक प्रतीक” यह उपशीर्षक है, जो श्री अरविन्द ने अपने महाकाव्य “सावित्री” को दिया है। यह आख्यान सावित्री-सत्यावान की कथा के नाम से बहुत प्रसिद्ध है और महाभारत में वर्णित है। महाभारत में इसका वर्णन सात संक्षिप्त सर्गों में आया है जो लगभग सात सौ पंक्तियों में पूरा हो जाता है। श्रीअरविन्द के हाथों में आकर यह कथा रूपान्तरित होकर एक वैश्विक महाकाव्य बन जाती है। यह अंग्रेजी साहित्य की सबसे अधिक लम्बी कविता है जो लगभग 24 हजार पंक्तियों, 49 सर्गों में 12 पर्वों (24 thousands lines, 49 cantos and 12 Books) में पूरी हुई है। श्रीअरविन्द का यह महाकाव्य मूल महाभारत आख्यान से लगभग 35 गुना अधिक लम्बा है। उन्हें ऐसे विशाल चित्रपट (Canvas) की जरूरत क्यों पड़ी? क्या उन्होंने मूल कथा को बदलकर उसमें नये विवरण जोड़ दिए? नहीं। कथा की विषय-वस्तु लगभग वही है। श्रीअरविन्द के इतने व्यापक कथा-कलेवर को लेने का कारण है कि उन्होंने सरल आख्यान को वैश्विक महत्ता के एक प्रतीक काव्य में रूपान्तरित कर दिया है। अब हम संक्षेप में इस परिवर्तन की समीक्षा करेंगे और ऐसा करते हुए हम “चिड़िया की आँख” वाली दृष्टि से पूरे महाकाव्य का अवलोकन करेंगे।

महाभारत कथा में अश्वपति मद्र प्रदेश का एक गुणवान और सहृदय राजा है। उसे जीवन का हर सुख प्राप्त है किन्तु वह निःसंतान है। अतः संतान पाने की कामना से वह अठारह वर्ष की कठोर तपस्या का व्रत लेता है। अन्त में देवी सावित्री उसके समक्ष प्रकट होती है और शीघ्र ही उसे एक कन्या रत्न पाने का वरदान देती है। महाभारत में प्रसंग माल दस पंक्तियों में प्रस्तुत तक दिया गया है।



श्रीअरविन्द ने सावित्री महाकाव्य में यह प्रसंग 22 संगों और 10,000 पंक्तियों (22 cantos and 10,000 lines) से अधिक में पूरा हुआ है। आखिर इस विषय प्रसंग को हजार गुना अधिक विस्तार देने का क्या प्रयोजन था? इस प्रश्न का सरल उत्तर यह है कि श्रीअरविन्द का राजा अश्वपति महाभारत कथा का सन्तान विहीन दुःखी राजा नहीं है जो सन्तान पाने भर के लिए तपस्या करता है। श्रीअरविन्द का राजा एक दृष्टा है, प्रबुद्ध मानवता का एक नेता एवं प्रतिनिधि है वह भी निःसंदेह एक खोज में है पर वह खोज उस सन्तान –प्राप्ति की व्यक्तिगत कामना के लिए ही नहीं है, वरन् उसकी खोज उस सृजनात्मक “सिद्धान्त” के लिए है जो समस्त मानवी-कुण्ठाओं, असन्तोषों तथा दुरितों का अन्त करने में सक्षम हो। यह वह तथ्य है जो अभी तक चिन्तकों, सुधारकों, क्रान्तिकारियों, यहाँ तक कि अवतारों द्वारा भी अनदेखा और अनछुआ बना रहा है। अश्वपति ने वह मानवी ज्ञान और प्रज्ञा हासिल कर ली है जो भू-मण्डल के पूर्वी और पश्चिमी द्वीपों को प्रदान की जा चुकी है। वह इस दुःखद सत्य का जानकार है कि कोई भी, न तो विज्ञान और तकनीक, ना धर्म और कला अभी तक उस सामर्थ्य व योग्यता को हासिल कर पाये हैं कि वे मनुष्य को मृत्यु, अज्ञान और कष्टों के पंजों से निकाल सकें। युग-युग से मनुष्य ने सदा ही भगवान् की अभीप्सा की है, प्रकाश, मुक्ति एवं अमरता की अभिलाषा की है पर क्या मनुष्य की यह आकांक्षा इस धरती के जीवन में अभी तक पूरी हुई है? इस सचाई को हमें सदैव ध्यान में रखना चाहिए कि श्रीअरविन्द के अश्वपति की खोज स्वयं योग रूप में उनकी अपनी खोज भी है। वास्तव में राजा के योग को अर्पित 22 सर्ग श्रीअरविन्द की अपनी तपस्या का भी दर्पण है एवं उनकी खोज की साक्षात् अभिव्यक्ति है। उन्हीं की तरह अश्वपति रूपान्तर के उस रहस्य को मानवता के लिए जीत लेना चाहता है जो मानवी चेतना का मूल स्वरूप है ताकि पृथ्वी का जीवन पूर्ण रूप से लिख सके, प्रस्फुटित हो सके।

इस प्रयोजन को पाने के लिए श्रीअरविन्द का राजा अश्वपति कठोर तपस्या अंगीकार करता है जो महाकाव्य में, “अश्वपति का योग” शीर्षक से वर्णित है। राजा के योग की इस प्रक्रिया को तीन क्रमावस्थाओं में रखा जा सकता है। पहली अवस्था है जिसके दौरान राजा अपने आत्मा को देह, प्राण और मन के बंधन से छुड़ाकर मुक्त कर लेता है, फलस्वरूप आध्यात्मिक परिपूर्णता उपलब्ध कर लेता है।

दूसरी अवस्था की विषय-साम्रगी पर्व-2 में आई है जिसका शीर्षक है- “विश्व के यात्री का पर्व” (The Book of the Traveller of the world)। यहाँ अश्वपति चेतना के उन क्षेत्रों एवं स्तरों की गवेषणा करता है जो भौतिक अचेतना से मन के चेतना-स्तरों तक और फिर मनोलोक के पूरे के प्रदेशों तक उद्घाटित हुए हैं। वह इस तपस् यात्रा को मनुष्य जाति के एक विशिष्ट प्रतिनिधि के रूप में अंगीकार कर अतिमानसिक क्षेत्रों को खोज लेने की सम्भावनाओं को सच करने एवं उन पर विजय-प्राप्ति के लिए करता है।



अब अश्वपति को यह प्रत्यक्ष बोध हो जाता है कि उस प्रभु ने ही मानवी प्रकृति को धारण किया हुआ है और मनुष्य जीवन का सच्चा प्रयोजन अपनी दिव्य प्रकृति को पुनः पा लेना है। यह दुर्लभ कार्य अकेले मानवी क्षमता से नहीं किया जा सकता। एक उच्चतम शक्ति को नीचे पृथ्वी पर आकर उसकी सहायता करनी होगी। वह यह भी देखता है कि मनुष्य की समस्याओं का समाधान न तो जीवन से आत्मा में पलायन करने में निहित है और न आत्मा को अस्वीकर कर देने में पाया जा सकता है। समाधान पृथ्वी पर एक नई सृष्टि के सृजन में निहित है जो लघु मानवी-चेतना को विशाल अतिमानसिक चेतना में रूपान्तरित कर सके। अश्वपति इसी महान कार्य को पूर्ण करने की आशा संजोता है।

अब अश्वपति अपनी अन्तर्यात्मा के अन्तिम मुहाने पर पहुँचता है और अन्ततः “दिव्य माता” के अन्तर्दर्शन का सौभाग्य पाता है।

माता उससे आग्रह करती है कि वह अपनी ही मुक्ति और सौभाग्य पर, जो उसने तपस्या के द्वारा प्राप्त किए हैं, सन्तोष करे और मनुष्य के लिए उसकी माँग न करें क्योंकि मानव-जीवन अभी दिव्य-जीवन के महान वरदान को धारण करने योग्य नहीं बन पाया है। वह माता कहती है—

मनुष्य बहुत दुर्बल है, वहन करने में “शाश्वत” का बोझ,

समय से पूर्व प्रकट हुआ सत्य, कर देगा पृथ्वी को खंड-खंड।

लेकिन अश्वपति केवल अपनी निजी मुक्ति और आनन्द के लिए उत्सुक नहीं है। वह जानता है कि सदियों से मनुष्य अपनी आकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए अथक संघर्ष कर रहा है, अतः वह मानव माल के प्रतिनिधि के रूप में दिव्य माता से सतत् आग्रह करता है कि इस नश्वर जीवन में भगवान कृपा का अवतरण हो, अविर्भाव हो, वे उसे यही आश्वासन दें। अश्वपति की आतुर प्रार्थना दिव्य माता से उनकी कृपा के अवतरण का वरदान प्राप्त कर लेती है। वे उसे वरदान देती हैं कि माता की कृपा मूर्तिमान होकर पृथ्वी पर उतरेगी और प्रकृति के दुर्भाग्य को परिवर्तित कर देगी।

निम्न पक्तियों में “माता” के इन आश्वासन- युक्त शब्दों को सुनिए-

“ओ तेजस्वी अग्रदूत! मैंने सुन ली है तेरी कातर पुकार

कोई शक्ति उतरेगी धरा पर और तोड़ेगी इसके लौह-नियमों को

कर देगी धरती के दुर्भाग्य को परिवर्तित, अपने निज आत्मा बल से।

समूचे विश्व को धारण कर सकने योग्य एक “असीम मन”

गहन प्रशान्ति से पूर्ण एक मधुर और उग्र हृदय



देवताओं के अनुराग से भरा आएगा यहाँ,
उसमें सन्निहित होंगी समस्त शक्तियाँ और महानताएँ
सौन्दर्य मूर्तिमान होकर इस धरती पर,
मेघ सम केशों में आनन्द करेगा विश्राम,
और “अमर प्रेम” उसकी देह में नीड़ वृक्ष के पक्षी की तरह,
अपने शोभायमान पंख फड़फड़ाएगा,
विषाद रहित रागों का संगीत उसके आकर्षण को बुनेगा
पूर्णता की वीणा उसकी वाणी में लय-ताल करेगी
स्वर्ग के झरने उसकी हँसी में कल-कल करेंगे
उसके ओंठ होंगे प्रभु के माधुर्य का मधुकोष
उसके अंग-अंग होंगे स्वर्गीय आनन्द के स्वर्णिम पात्र
उसके उरोज सुशोभित होंगे जैसे स्वर्ग के खुशनुमा फूल
निःशब्द वह धारण करेगी अपने अन्दर महान प्रज्ञा को।
ऐसी महाशक्ति होगी उसके पास जैसी विजेता की तलवार
उसके नेत्रों से निहारेगा, “शाश्वत का परम सुख”
“मृत्यु” के भीषण मुहूर्त में एक बीज बो दिया जाएगा
स्वर्ग की एक शाखा, धरती की मिट्टी में कर दी जाएगी पुनः रोपित
और एक “अमर संकल्प” के द्वारा भाग्य बदल दिया जाएगा।”

अनुवाद-विमला गुप्ता

सावित्री एक सक्षिप्त परिचय



नव दृष्टि

सुमिलानन्दन पंत

प्रथम प्रदीप जलाया तुमने!
भू मानव के गुहा द्वार में
निश्चेतन के अन्धकार में
ज्योति केतु फहराया तुमने!
टूट गई निद्रा चेतन की
छुटी कालिमा जीवन मन की,
लीन हुए दुविधा-संशय-भय
मति का कलुष मिटाया तुमने!
किसे ज्ञात था, निशि विनाश की
वर्ति बनेगी नव प्रकाश की?
तम प्रकाश,चेतन ही जड़ है,
मल अमोघ सिखाया तुमने!
मौन सुनहली लौ दिगंत स्मित
दौड़ रही दीपों में अगणित,
भव निशि का पहिला दीपोत्सव,
भू पर स्वर्ग बुलाया तुमने!
नीराजन की दीप पाँति यह,
भू मनुजों की मुक्त जाति यह,
दीप्ति श्रेणि की श्रेणि, व्यक्ति को
दिव्य स्व-रूप दिखाया तुमने!

पूर्वप्रकाशित कर्मधारा1983



प्रेम और परमात्मा

संतों की उपदेश देने की रीति-नीति भी अनूठी होती है। कई संत अपने पास आने वाले से ही प्रश्न करते हैं और उसकी जिज्ञासा को जगाते हैं; और सही-सही मार्गदर्शन कर देते हैं।

आचार्य रामानुजाचार्य एक महान संत एवं धर्माचार्य थे। दूर-दूर से लोग उनके दर्शन एवं मार्गदर्शन के लिए आते थे। वे सहज तथा सरल रीति से उपदेश देते थे।

एक दिन एक युवक उनके पास आया और पैरों में वंदना करके बोला। “मुझे आपका शिष्य बनना है। आप मुझे अपना शिष्य बना लीजिए।”

रामानुजाचार्य ने कहा: “तुझे शिष्य क्यों बनना है?”

युवक ने कहा: “मेरा शिष्य बनने का प्रयोजन तो परमात्मा से प्रेम करना है।”

संत रामानुजाचार्य ने तब कहा: “इसका अर्थ है कि तुझे परमात्मा से प्रीति करनी है। परन्तु मुझे एक बात बता कि क्या तुझे तेरे घर के किसी व्यक्ति से प्रेम है?”

युवक ने कहा: “ना, किसी से भी मुझे प्रेम नहीं।”

तब फिर संत श्री ने पूछा: “तुझे तेरे माता-पिता या भाई-बहन पर स्नेह आता है क्या?”

युवक ने नकारते हुए कहा, “मुझे किसी पर भी तनिक माल भी स्नेह नहीं आता। पूरी दुनिया स्वार्थपरायण है, ये सब मिथ्या मायाजाल है। इसीलिए तो मैं आपकी शरण में आया हूँ।”

तब संत रामानुज ने कहा बेटा, मेरा और तेरा कोई मेल नहीं, तुझे जो चाहिए वह मैं नहीं दे सकता।

युवक यह सुन स्तब्ध हो गया। उसने कहा “संसार को मिथ्या मानकर मैंने किसी से प्रीति नहीं की, परमात्मा के लिए मैं इधर-उधर भटका, सब कहते थे कि परमात्मा के साथ प्रीति जोड़ना हो तो संत रामानुज के पास जा, पर आप तो इन्कार कर रहे हैं।”

संत रामानुज ने कहा “यदि तुझे तेरे परिवार से प्रेम होता, जिन्दगी में तूने तेरे निकट के लोगों में से किसी से भी स्नेह किया होता तो मैं उसे विशाल स्वरूप दे सकता था। थोड़ा भी प्रेमभाव होता, तो मैं उसे विशाल बना के परमात्मा के चरणों तक पहुँचा सकता था।”

संत रामानुज ने उस युवक को समझाया, “देखो, ये सही है कि छोटे से बीज में से विशाल वटवृक्ष बनता है। परन्तु बीज तो होना चाहिए



ना! जो पत्थर जैसा कठोर एवं शुष्क हो, उस में से प्रेम का झरना कैसे बहा सकता हूँ? यदि बीज ही नहीं तो वटवृक्ष कहाँ से बना सकता हूँ? तूने किसी से प्रेम किया ही नहीं, तो तेरे भीतर परमात्मा के प्रति प्रेम की गंगा कैसे बहा सकता हूँ?

कहानी का सार यह है कि जिसे अपने निकट के भाई-बन्धुओं से प्रेमभाव नहीं, उसे ईश्वर से भी प्रेम नहीं हो सकता। हम अपने आस-पास के लोगों और कर्तव्यों से मुंह नहीं मोड़ सकते। यदि हमें आध्यात्मिक कल्याण चाहिए तो अपने धर्म-कर्तव्यों का भी उत्तम रीति से पालन करना होगा। -----

मानव और अतिमानव

सुखवीर आर्य

संसार को सुखी करना जिनके जीवन का लक्ष्य बन चुका है, समाज के उत्थान के लिए अपने जीवन का बलिदान करने को जो उद्यत हैं, मानवता का मंगल ही जिनकी दृष्टि में सर्वोच्च, सबसे महत्वपूर्ण कर्म है; उनकी व्यक्तिगत अभिलाषाएँ अथवा माँगें नहीं होतीं, होनी भी नहीं चाहिए। वे शारीरिक सुख-भोगों को, अहंकार को संतुष्ट करने वाली वस्तुओं को तुच्छ समझते हैं। उनके मन में केवल एक ही विचार रहता है-कैसे प्राणिमात्र को सुखी किया जाए, उसके जीवन-स्तर को उठाया जाये।

अतिमानस की ओर

मेरा जन्मदिन

सुरेन्द्रनाथ जौहर

जैसे सारा संसार उलझन और घोटोले में पड़ जाता है ऐसे ही मेरा जन्मदिन भी। बचपन में मैंने अपनी माँ से पूछा कि मैं किस दिन पैदा हुआ था। मेरी माँ कहने लगी, “पुतरा (बेटा)! मुझे दिन-विन तो कुछ मालूम नहीं। न मैं पढ़ी-लिखी हूँ। श्रावण का महीना था, भोर की बेला थी, ठंडी-ठंडी हवा चल रही थी, नन्हीं-नन्हीं बूँदें पड़ रही थीं-उस समय तुम्हारा जन्म हुआ था।”

पर इससे तो कोई मतलब नहीं निकला।

दो-तीन साल में गाँव के पण्डितजी ने मेरी जन्म-पत्नी बनाकर दी। लंबी तो बहुत थी परन्तु उससे भी कोई ठीक मतलब नहीं निकलता था। वह बेचारे भी बहुत पढ़े लिखे नहीं थे। परन्तु कई महीने लग कर बनाई होगी- सुन्दर, चमकती हुई रोशनाई में और सुलेख में।

बहुत सालों बाद मैं पांडिचेरी आश्रम जा पहुँचा और भाग्यवश मैं माताजी से ज़िक्र कर बैठा। उन्होंने पूछा, “जन्मपत्नी कहाँ है?” मैंने दिल्ली से मँगवाकर उनको दिखाई। अच्छी खासी लंबी थी। माताजी बड़ी खुश हुई और हँसने लगीं। मैंने समझा बात यहीं खत्म हुई, परन्तु झट वह कहने लगीं, “तुम इस जन्मपत्नी को मेरे पास छोड़ जाओ।” मैंने सोचा मेरी जन्मपत्नी सम्हल गई है और मुझे कुछ न कुछ लाभ होगा।

दूसरे ही दिन माताजी के हाथ का लिखा हुआ एक सुन्दर कार्ड प्लास्टिक के लिफाफे में सिला हुआ मेरे निवास-स्थान पर पहुँचा दिया गया। उस पर लिखा था- तुम्हारा जन्मदिन 13 अगस्त, 1903 है-(your birthday is on 13th August 1903)

अब मैं सोचता हूँ कि उलझन तो पड़ ही गई है तो मेरा जन्मदिन 13 जुलाई से 13 अगस्त तक माना जाना चाहिए।

अब इस वर्ष से मैं ऐसा ही कर रहा हूँ-‘बर्थ डे केक’, मिठाइयाँ खाने और तोहफे(presents)लेने के लिए नहीं, न ही ‘हैपी बर्थडे टू यू’ सुनने के लिए, बल्कि इसलिए कि एक महीना तो सोचने और अन्दर जाने के लिए मिले, वरना जन्मदिन की क्या सार्थकता है? जन्म तो हर महीने, हर दिन ही होता है, बल्कि हर समय इंसान का एक नया ही जन्म होता रहता है।



आश्रम-गतिविधियाँ

श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर (चाचा जी) का जन्म-दिवस

13 अगस्त श्री अरविन्द आश्रम, दिल्ली शाखा के संस्थापक श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर का जन्म दिन है। जौहर साहब को उनके आत्मीय स्वभाव के कारण चाचा जी का सहज सम्बोधन प्राप्त था। श्रीमाँ के निर्देशन में उन्होंने इस आश्रम की संस्थापना की थी। इस दिन चाचाजी का स्मरण करते हुए आश्रम के युवा वर्ग ने एक लघु-नाटिका द्वारा उनके जीवन की झलकियाँ प्रस्तुत कीं। ऑनलाइन वार्ता में भी डॉ.अर्पणा रॉय द्वारा चाचा जी के योग-पाथिक स्वरूप का भाव पूर्ण चित्रण प्रस्तुत किया गया



चाचाजी के जीवन की झलकियाँ



15 अगस्त श्री अरविन्द का जन्म-दिवस तथा भारतीय स्वतंत्रता-दिवस





स्वाधीनता दिवस का आरंभ देश के ध्वजारोहण द्वारा किया गया, तत्पश्चात् महान योगी श्री अरविन्द का स्मरण करते हुए समाधि के निकट श्रीमाँ की प्रतीक-पताका लहराई गई। एक लम्बे अन्तरोल के

पश्चात् इस दिन आश्रम का प्रवेश-द्वार खोला गया, ताकि श्रद्धालु-जन समाधि-दर्शन करते हुए ध्यान-कक्ष में कुछ समय बैठ सकें तथा अपने गुरु को नमन कर सकें। वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते हुए इसके लिए आश्रम द्वारा सरकारी निर्देश के अनुसार विशेष सुरक्षा प्रबंध किए गए। प्रवेश द्वार के पास ही कीटाणु नाशक (सेनीटाइजेशन टैण्ट) लगाया गया। हर आने वाला उसमें से होकर सामाधि-स्थल तथा ध्यान-कक्ष की ओर जा सकता था। व्यावहारिक भौतिक सीमाओं के पालन की कुछ विवशता तो थी, फिर भी चारों तरफ वातावरण गहन शांति और दिव्यता के स्पन्दन से परिपूर्ण था।





लोगों में इस अवसर पर हर्ष और उल्लास स्पष्ट दिख रहा था।

इस दिवस पर डॉ. रमेश बिजलानी द्वारा विशेष वार्ता (Wish Macaulay Had Been More Explicit Online)
प्रस्तुत की गई।

सत्संग- ऑनलाइन (Online) वार्ताएँ-

विगत कुछ महीनों से आश्रम द्वारा महामारी कोरोना से उत्पन्न विषम परिस्थितियों के कारण रविवार के सत्संग के रूप में परिवर्तन किया गया और प्रति सप्ताह होने वाली वार्ताएँ (क्रमिक रूप से हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में) ऑनलाइन उपलब्ध कराई जा रही हैं।

वक्ता
डॉ. रमेश बिजलानी

वक्ता
डॉ. अपर्णा रॉय

यहाँ
क्लिक करें



